उपसंहार

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध कुँवरनारायण के व्यापक काव्य संसार को एक नज़र से देख लेने की कोशिश मात्र है। बीत रहे समय में स्खलित होती जा रही मनुष्यता को अपनी गरिमा में बचाये रखने का संदेश देने वाले कवि ने जिन कोणों से जीवन को देखा है उसी की पड़ताल करने की एक चेष्टा से यह शोध प्रबन्ध लिखा गया है। नयी कविता आंदोलन के जमाने से आज तक सक्रिय कवि ने विभिन्न आंदोलनों से गुजरते हुए भी 'केवल कविता की ऊँचाई से' दुनिया देखने की कोशिश की है। किसी वाद और क्रांति के प्रचलित मुहावरों से दुनिया बदल देने का दम्भ न भरने वाले कुँवरनारायण ने आदमी में 'मनुष्यतर' बने रहने के आशय से सारा काव्य विधान किया। इसिलए मनुष्य के हितार्थ जो भी, जहाँ भी मिला उन्होंने वर्तमान समय की प्रासंगिकता में उसको ढाल लिया। ऐसे में चाहे मिथकों की दुनिया हो, इतिहास के तथ्य हों या फिर दार्शनिक सिद्धान्त। ज़बरदस्ती किसी विचार धारा का आग्रह कहीं नहीं दिखाई पड़ता।

कुँवरनारायण की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। अन्य समकालीन कवियों से नितान्त भिन्न किन्तु यह भिन्नता सायास उपक्रम द्वारा स्थापित नहीं है, बल्कि रोजमर्रा के अनुभवों से उपजी संवेदना की विशेष अभिव्यक्ति के कारण है। हालाँकि नयी कविता में उनके समकालीन प्रमुख कवियों में सबकी अपनी अलग पहचान है। चाहे रघुवीर सहाय की कविता हो, चाहे केदारनाथ सिंह की कविता हो या फिर सर्वेश्वर दयाल की कविता। सबकी युग चेतना में मनुष्य की समस्या ही केन्द्रीय स्थान रखती है, पर विशिष्ट अभिव्यक्ति के साथ। इसलिए एक दूसरे की तुलना करके कविता की गहराई मापने का नजरिया बिल्कुल अप्रासंगिक है।

सामाजिक विसंगतियों से संघर्ष के इस वर्तमान समय में कवि को कुछ आदिम स्वप्नों की बार-बार याद आती है। जिसमें वह रथ का टूटा हुआ पहिया लेकर खड़ा है। यानि कि अपनी ओर से अपना श्रेष्ठतम प्रयास करता हुआ व्यक्ति है जहाँ निडरता और दृढ़

निश्चय ही उसके पहले और अन्तिम हथियार हैं। कुँवरनारायण की कविता मिथकों में इसलिए प्रवेश करती है क्योंकि वह दिखाना चाहती है कि मानवता की रक्षा का मूल्य सदियों से चला आ रहा है। नैतिक संकटों के समय आदमी ही आदमी को बचाया है। मिथकों की दुनिया में आदमी होने की जगह बची है। सभ्यता का आवरण आदमी पर तरह–तरह की पर्त चढ़ाता गया है और मनुष्य उन पर्तों की दुनिया के पीछे अपने आप को विस्मृत करता चला गया है। कुँवरनारायण उन तहों की पृष्ठभूमि में मानवता के स्पंदन को आलोकित करना चाहते हैं इसलिये अपनी जड़ों में रोशनी तलाश करते हैं। उनके काव्य में मिथकीय दुनिया का प्रवेश इसी कार्य–व्यापार का परिणाम है।

कुँवरनारायण के काव्य के मिथक धार्मिक नहीं है। उन्होंने उन्हीं लोक व्याप्त मिथकीय संदर्भों को चुना है जहाँ उच्चतर आदर्श सुरक्षित हैं। महाभारत के अभिमन्यु से लेकर रामायण के 'सम्पाती' तक एवं कठोपनिषद् के 'नचिकेता', 'वाजश्रवा' से लेकर 'दधीचि' तक सभी चरित्रों में अमानवीयता के खिलाफ संघर्ष और मानवीयता की स्थापना के उद्देश्य अन्तर्निहित हैं। यहीं नहीं बल्कि चरित्रों के चरित्रांकन के अतिरिक्त मिथकीय परिवेश निर्माण की कल्पना में भी यही मान्यताएँ दिखती हैं।

कुँवरनारायण के काव्य में मिथक में तब्दील होते हुए यथार्थ की भी चिंताएं बेहद संवेदशीलता से अंकित की गयी हैं। सत्य, विश्वास, प्रेम, ईमानदारी जैसे मूल्य जहाँ केवल स्मृतियों की बातें लगने लगी हों वहाँ अपने ही घर लौटना किसी चमत्कार से कम नहीं लगता। कवि 'अपने सामने' आश्चर्य व्यक्त करता है कि–

"आज सारे दिन सच बोलता रहा
और किसी ने बुरा नहीं माना।
आज सबका यक़ीन किया
और कहीं धोखा नहीं खाया।
और सबसे बड़ा चमत्कार तो यह

कि घर लौटकर मैंने किसी और को नहीं
अपने ही को लौटा हुआ पाया।" ('अपने सामने', संग्रह से)

यथार्थ को अमानवीय रूप में बदलते हुए देखकर अतीत की स्मृतियों की ओर देखने में यही संबंध है कुँवरनारायण की कविताएँ जिसके निर्वाह का प्रमाण हैं।

अपने परिवेश को अपने आत्मीय की तरह देखता कवि मामूली से मामूली बात को जिस संवेदनशीलता से महसूस करता है वह विलक्षण है–

"हवा और दरवाज़ों में बहस होती रही
दीवारें सुनती रहीं
धूप चुपचाप एक कुर्सी पर बैठी
किरणों की ऊन का स्वेटर बुनती रही।" ('परिवेश; हम तुम', संग्रह से)

इसी परिवेश को आदमी की दुनिया में बचाये रखने की कोशिश में ही 'आदमी की तरह ज़िंदा रहने की कोशिश' अन्तर्निहित है अन्यथा वह 'अद्‌भुत कुछ जीने की चोर–कोशिश' हो जाती है।

आदमी की दुनिया से छिनते हुए इस परिवेश के प्रति कवि की 'दिक्कत' कुछ इस तरह है–

"शायद वहीं एक सभ्यता का अतीत हमसे विदा हुआ था
जहाँ साँस लेने में पहली बार मुझे
दिक्कत महसूस हुई थी
और मैं बेतहाशा भागा था
उस ज़रा–से दिखते आसमान, वर्तमान और खुली हवा की ओर
जो धीरे–धीरे मुँदते चले जा रहे थे।" ('कुँवरनारायण संसार–१', संग्रह से)

अपने समय और परिवेश से यह मुठभेड़ ही उन्हें स्मृतियों की ओर देखने पर और पाठक को कुँवरनारायण की कविता की ओर देखने पर बाध्य करती है। कुँवरनारायण की

कविता में यथार्थ से मुठभेड़ के बहुत ठोस परिणाम दिखते हैं अर्थात् सामाजिक ऐतिहासिक चेतना से गठित विसंगतियों एवं असामान्यताओं को पहचान लेने की क्षमता कुँवरनारायण की कविता में प्रत्येक स्थल पर मौजूद है। इसलिए अशोक बाजपेयी के शब्दों में कहें तो "इतिहास, आशा–निराशा, सुख–दु:ख कुँवरनारायण की कविता में किसी विराट् सत्य की तरह नहीं रोजमर्रा की सचाइयों की तरह आते हैं जिनसे लिपटता–जूझता आदमी चलता है।" इन अर्थों में कहें तो कुँवरनारायण की कविताएं रोजमर्रा की सच्चाइयों एवं मनुष्य की सभ्यता का तीसरा इतिहास लिखती हैं जहाँ–

"बारूद में आग लगाने के इतिहासों से अलग
एक तीसरा इतिहास है
रहमतशाह की बीड़ियों और
मत्सराज की माचिसों के बीच सुलहों का" ('कुँवरनारायण संसार–१', संग्रह से)

यथार्थ की समझ और उसकी अभिव्यक्ति का इससे अधिक ठोस और कारगर तरीका और क्या हो सकता है। जहाँ कवि सामाजिक–ऐतिहासिक चेतना से गठित विसंगतियों में आम आदमी के दुखों और उन दुखों की जिम्मेदार साज़िशों को उजागर करने का प्रयास करता हो।

अपने काव्य में और जीवन में अन्तर्मुखी और बर्हिमुखी दृष्टि का विभाजन न मानने वाले कुँवरनारायण सही अर्थों में 'जीवन की आलोचना' और कविता में फर्क नहीं समझते। उनके काव्य का प्रत्येक शब्द मानवीय जीवन मूल्यों की आस्था के आशय से निबद्ध है। आज के प्रचलित मुहावरे में प्रतिबद्धता का अर्थ चाहे जो हो पर कुँवरनारायण का काव्य 'मनुष्यतर' लौटने की प्रतिबद्धता से अवश्य जुड़ा हुआ है।